ISSN 2455-9253

वेद-सविता

अगस्त 2022

वर्ष 42, अंक 3

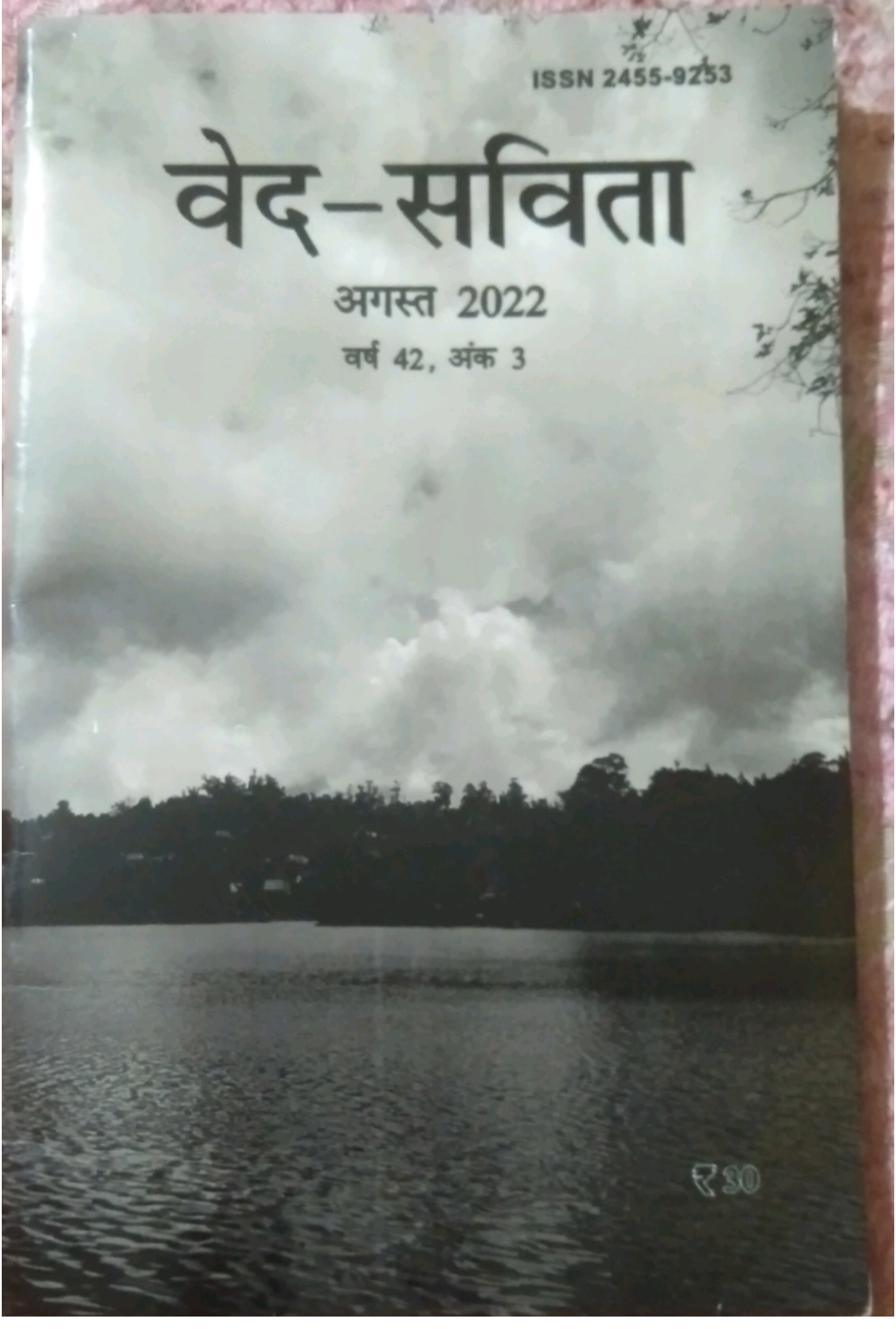

₹30

कहां क्या?

वैदिक चिंतन

विरोहण, स्वामी विद्यानंद 'विदेह', पृष्ठ 5
'द्यां मा लेखीरन्तरिक्षं ...' (यजुर्वेद 5.43)
दैवी वाणी, अभयदेव शर्मा, पृष्ठ 8
'सं-जयन् पृतना ...' (अथर्ववेद 5.20.4)
सबकी आयु, सबका जीवन, प्रवेश सक्सेना, पृष्ठ 14
'दिवो मूर्धाऽसि ...' (यजुर्वेद 18.54)
अनित्यता, संतोष भारद्वाज, पृष्ठ 16
'अश्वत्थे वो निषदनं ...' (यजुर्वेद 35.4)
आत्मशक्ति से लाभ, जितेन्द्र पाहुजा, पृष्ठ 19
'तमिन्द्रं वाजयामसि ...' (सामवेद 119)
सरस्वती वंदना, अशोक जौहरी, पृष्ठ 20
'सरस्वतीं देवयन्तो ...' (ऋग्वेद 10.17.7)
उज्जेता, स्वामी विद्यानंद 'विदेह', पृष्ठ 21
'स्वतवाँश्च प्रघासी ...' (यजुर्वेद 17.85)
इंद्रियरूपी घोड़ों को कसो, प्रवेश सक्सेना, पृष्ठ 25
'युञ्जन्त्यस्य काम्या ...' (ऋग्वेद 1.6.2)
संयमित मन, वरुणदेव शर्मा, पृष्ठ 26
'सुषारथिरश्वानिव ...' (यजुर्वेद 34.6)
शक्ति की प्राप्ति कैसे?, संतोष भारद्वाज, पृष्ठ 27
विचार और कर्म की पवित्रता, प्रद्युम्न शर्मा, पृष्ठ 31
एक ही देव उपास्य है, सावित्री गुप्ता, पृष्ठ 37
सृष्टि और सृष्टिकर्त्ता, विमला वर्मा, पृष्ठ 43

अन्य लेखन

वन्दे वेदमातरम्, बद्रीप्रसाद पंचोली, पृष्ठ 46
पाप करने से ईश्वर रोकता क्यों नहीं?, सुरिन्द्र चौधरी, पृष्ठ 48
वेदों में आधुनिक विज्ञान के संकेत, किरण आर्या, पृष्ठ 51

वेदों में आधुनिक विज्ञान के संकेत

किरण आर्या

वेद शब्द–विद ज्ञाने, विद सत्तायाम्, विद्लृ लाभे, विद विचारणे, इन चार धातुओं से घञ् प्रत्यय करके बनता है। वेद के समान किसी भी द्रव्य की क्रिया और प्रक्रिया को विशेष रूप से जानना ही विज्ञान कहलाता है, जिसे आधुनिक भाषा में साइंस कहते हैं। वस्तुतः 'ज्ञा अवबोधने' धातु से निष्पन्न यह विज्ञान शब्द 'विद ज्ञाने' धातु से निष्पन्न वेद शब्द का ही पर्यायवाची है। अतः जब वेद शब्द का अर्थ ही विज्ञान हुआ तो वेदों में सृष्टिगत विज्ञान संपूर्णता से है, यह स्वयं ही ज्ञात होता है क्योंकि सृष्टि के आदि में ईश्वरप्रदत्त वेद ही ज्ञानशून्य मानव को जड़-चेतन जगत् को उपयोग करने का, पदार्थों की महत्ता जानने का, उसे ज्ञान-विज्ञान से युक्त करने का प्रथम श्रेय प्रदान करते हैं।

ऋषि दयानंद ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के वेदविषयक प्रकरण में लिखते हैं, **चत्वारो वेदविषयाः सन्ति विज्ञानकर्मोपासनाज्ञान-काण्डभेदात्। तत्रादिमो विज्ञानविषयो हि मुख्योऽस्ति, तस्य परमेश्वरादारभ्य तृणपर्यन्तपदार्थेषु साक्षात् बोधान्वयत्वात्**, अर्थात्, चारों वेदों के विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान–ये चार विषय हैं। इनमें विज्ञान विषय ही मुख्य है क्योंकि विज्ञान द्वारा परमेश्वर से लेकर तृणपर्यंत सभी पदार्थों का साक्षात् बोध होता है।

मनु का कहना है :

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति।

तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते। मनुस्मृति 4.20

अर्थ : मनुष्य जैसे जैसे शास्त्रों का अच्छी प्रकार अभ्यास करता है, वैसे वैसे वह विज्ञान जानने लगता है और यह विज्ञान (विशेष ज्ञान) उसे रुचिकर लगने लगता है।

तात्पर्य यह हुआ कि जैसे जैसे हम आधिदैविक और आधिभौतिक दृष्टि से वेदों में प्रवेश करते हैं तो पाते हैं कि **सर्वं वेदात् प्रसिद्ध्यति**, वेदों में तो वे सभी विज्ञान हैं।

पाश्चात्य वैज्ञानिक डा. वी. सी. रेले अपने ग्रंथ 'वैदिक गॉड्स' में लिखते हैं,

'वेद के इंद्र, वरुण, आदि देवता मानव शरीर के भीतर विद्यमान भिन्न भिन्न चक्र, अंगों और मर्मस्थलों के वाचक हैं। हमारा आज कल का नाड़ी-संस्थान की रचना संबंधी विज्ञान ऋग्वेद के जगत् संबंधी वर्णनों से इतना अधिक मिलता है कि मन में प्रश्न उठने लगता है कि वेद धर्मग्रंथ हैं या नाड़ी संस्थान रचना-क्रिया संबंधी विज्ञान का ग्रंथ! जिस विज्ञान के पूर्ण बोध के बिना वेद के मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक विचार समझ में नहीं आ सकते। हमें मानना होगा कि प्राचीन ऋषि-मुनि विज्ञान की सभी शाखाओं में हमारी ही भांति उन्नत थे। वे वैज्ञानिक विषयों को हमारी अपेक्षा अधिक जानते थे, ऋग्वेद के कितने ही मंत्र हमें इसलिए समझ में नहीं आते क्योंकि हमारा आज का विज्ञान अपूर्ण है।'

योरोपवासी वैज्ञानिक न्यूटन के आकर्षण सिद्धांत की झलक भास्कराचार्य के 'सिद्धांतशिरोमणि' ग्रंथ में मिलती है। उनका कहना है,

आकृष्टशक्तिश्च मही तया यत्
खस्थं गुरु स्वाभिमुखीकरोति।
आकृष्यते तत्पततीव भाति समे समन्तात् कुरियं प्रतीतिः।

अर्थ : सर्वपदार्थगत आकर्षण शक्ति विद्यमान है, जिस शक्ति से यह पृथिवी आकाशस्थ पदार्थों को अपनी ओर करती है और जिसे यह खींच रही है वह गिरता हुआ प्रतीत होता है, अर्थात्, पृथ्वी आकाश में फेंकी हुई वस्तु को अपनी ओर खींचकर ले आती है, इसे गिरना कहते हैं। वेद में भी इस ओर संकेत मिलता है,

आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च ।
हिरण्ययेन सविता रथेन देवो याति भुवनानि पश्यन्।

ऋग्वेद 1.35.2

(सविता देवः) सूर्य देव (कृष्णेन रजसा) आकर्षण शक्ति से युक्त लोकों के साथ (वर्तमानः) वर्तता हुआ, (अमृतं मर्त्यं च) अमृत पृथिवी, आदि और मर्त्य जीवों को, (आ निवेशयन्) अपने अपने कार्य में युक्त करता हुआ, (भुवनानि पश्यन्) भुवनों को देखता हुआ (याति) गति करता है।

[*लोकाः रजांसि उच्यन्ते*, निरुक्त 4.19]

इस मंत्र में कृष्ण शब्द आकर्षण शक्ति को द्योतित कर रहा है। ऐसी अनेक ऋचाएं हैं जो सूर्य तथा पृथिवी के बीच में स्थित आकर्षण शक्ति का अनुमान कराती हैं। इस परस्पर आकर्षण के कारण न सूर्य पृथ्वी पर गिरता है और न पृथ्वी, आदि ग्रह भ्रमण करते हुए सूर्य के समीप पहुंच जाते हैं।

चिरकाल से यह प्रश्न उपस्थित होता था कि जब सभी वस्तुएं पृथिवी की आकर्षण शक्ति द्वारा ऊपर से नीचे गिरती हैं तो अग्नि नीचे से ऊपर क्यों उठती है? इस विषय में प्रसिद्ध दार्शनिक और वैज्ञानिक अरस्तु ने कहा कि विश्व में हर पदार्थ मूलतः सुनिश्चित स्थान रखता है और उसके अंश उसी की ओर पहुंचना चाहते हैं। जैसे मृत्पिण्ड पृथिवी का अंश होने से पृथ्वी पर आता है, वैसे ही अग्नि सूर्य संबंधित होने से ऊपर सूर्य की ओर आकृष्ट होती है। ऐसा ही संकेत इस वेदमंत्र में भी मिलता है,

दिवः शिशुं सहसः सूनुमग्निं यज्ञस्य केतुमरुषं यजध्यै।

ऋग्वेद 6.49.2

अर्थ : स्वर्ग के पुत्र, बल के लिए उत्पन्न, यज्ञ के ध्वज रूप तेजस्वी अग्नि की यज्ञ करने के लिए मैं स्तुति करता हूं।

तात्पर्य यह हुआ कि धरती की अग्नि सूर्य का शिशु है। पुत्र पिता की ओर आकृष्ट होता है। इसी आशय को पातंजल व्याकरण महाभाष्य भी इन शब्दों में प्रकट करता है–**ज्योतिषः विकारः अर्चिः आकाशदेशे सुप्रज्वलितं नैव तिर्यग्गच्छति नार्वागवरोहति, ज्योतिषः विकारः ज्योतिरेव गच्छति आन्तर्यतः**, अर्थात्, ज्योति का विकार ज्योति को ही प्राप्त होता है।

वैदिक युग ने विद्युत्, आदि उन सभी उत्कृष्ट स्वरूपों को भलीभांति पहचान लिया था जो अधुनातन विज्ञान की मूलभूत आधार हैं। विद्युत् का उद्गम स्थल, विद्युत् के कार्य, आदि का विस्तार से वेदों में वर्णन आता है। विद्युत् के पर्यायवाची वेद में प्रयुक्त उर्वशी, अप्सरा, आदि नाम इस बात को सुपुष्ट करते हैं कि विद्युत् का उद्गम स्थल जल है–**अप्सु सरतीति अप्सरा**, 'जो जलों में रहती है वह अप्सरा है।' **उरु**

अश्नुते इति उर्वशी = जो बहुत व्यापक होती है अथवा **उरु वशः अस्याः इति उर्वशी** = इसका बहुत वश है, इसलिए यह उर्वशी है। विद्युत् के वश में सारे संसार की स्थिति है।

धरती पर ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत है सूर्य। उसकी ऊर्जा को विद्युत् रूप में परिवर्तित किया जाता है। वेद में कहा गया है, **सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च** (यजुर्वेद 7.42), 'सूर्य जड़ और चेतन जगत् की आत्मा है।'

वेद में यह भी बताया कि यह विद्युत् मित्र और वरुण नामक शक्तियों की देन है, जो आज हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के नाम से जानी जाती है। हाइड्रोजन वायु सबसे हल्की होती है, अतः मित्र 'मा माने' धातु से निष्पन्न है, जो माप तोल की इकाई माना जाता है और वरुण ऑक्सीजन है क्योंकि यह सबके द्वारा वरणीय है। इसके बिना कोई भी प्राणी एक क्षण भी नहीं रह सकता,

मित्रं हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादसम्।
धियं घृताचीं साधन्ता। ऋग्वेद 1.2.7

अर्थ : स्नेहमयी बुद्धि (जल) और कर्म (विद्युत्) को संपादित करनेवाले, पवित्र बल से युक्त मित्र (हाइड्रोजन) को और शत्रुनाशक वरुण (ऑक्सीजन) को मैं बुलाता हूं, उनकी स्तुति करता हूं।

वेद में कतिपय स्थलों में सम्पतत्र, रेणु, आदि शब्द परमाणु के लिए प्रयुक्त हैं, जो तीव्र गतिशील और नाचते हुए से रहते हैं। पदार्थविद्या के बोधक 'वैशेषिक दर्शन' में उसके व्याख्याकार उदनयाचार्य सम्पतत्र शब्द का प्रयोग अणु अर्थ में करते हैं–**अत्रा वो नृत्यतामिव तीव्रो रेणुरपायत्**, 'हे यहां नाचता हुआ तीव्र रेणु का पात हुआ, यानी, तीव्र रेणुसमूह का धक्का लगा।'

पृथ्वी के सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करने का संकेत भी मिलता है। **या गौः वर्तनिं पर्येति** (ऋग्वेद 10.65.6)। वैदिक कोश निरुक्त में गौ शब्द पृथ्वी नामों में पढ़ा है। गतिशील होने से पृथ्वी गौ है। (या गौः) जो गौ पृथ्वी है वह (वर्तनिम्) अपनी परिधि में घूमती हुई (परि एति) चारों ओर घूमती है।

सृष्टि रचना के विषय में वेद कहता है, **यथापूर्वमकल्पयत्**